णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स

नित्य-नियम

– संयोजक –

जैनधर्म-दिवाकर; साहित्य-रत्न; जैनागम-रत्नाकर;
श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण संघ के
आचार्यसम्राट्

परमपूज्य श्री आत्माराम जी

महाराज के सुशिष्य

श्री ज्ञान मुनि जी

—प्रकाशक—

सेठ सोहन लाल जुगल किशोर जैन

मण्डी केसर गंज, लुधियाना।

द्वितीय वार 1000 | वीरसम्वत् २४८३ विक्रमसम्वत् २०१३ | मूल्य ५ आना

करना चाहिए और साथ में दूसरों को भी इस से प्रतिलाभित करना चाहिए जिस से यह संयोजन अधिकाधिक लोगभोग्य और हितावह बन सके।

"नित्यनियम" का यह द्वितीय संस्करण निकल रहा है, इस में पूर्वापेक्षया आवश्यक परिमार्जन और परिवर्धन भी कर दिया गया है।

चैत्रशुक्ला १
२०१३
लुधियाना

प्रार्थी-
—ज्ञान मुनि

—प्राप्तिस्थान—

(१) श्री जैन शास्त्र माला कार्यालय
जैन स्थानक, लुधियाना।

(२) ला० गुज्जर मल प्यारे लाल जैन
चौड़ा बाज़ार, लुधियाना।

मङ्गल सूक्त

अर्हन्तो भगवन्त इंद्र-महिताः, सिद्धाश्च सिद्धिस्थिताः ।
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः, पूज्या उपाध्यायकाः ॥
श्री सिद्धान्त-सुपाठका मुनिवरा, रत्न-त्रयाराधकाः ।
पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो, वीरं बुधाः संश्रिताः ।
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्यं नमः ॥
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्रीधृतिकीर्त्तिकांतिनिचयो, हे वीर ! भद्रं दिश ॥
ब्राह्मी चन्दन-बालिका भगवती, राजीमती द्रौपदी ।
कौशल्या च मृगावती च सुलसा, सीता सुभद्रा शिवा ॥
कुन्ती शीलवती नलस्य दयिता, चूडा प्रभावत्यपि ।
पद्मावत्यपि सुन्दरी दिनमुखे, कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥

संसार-दावानल-दाह-नीरं,
सम्मोह-धूलि-हरणे समीरं ।
माया-रसा-दारण-सार-सीरं ।
नमामि वीरं गिरिराजधीरम् ॥

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे भवन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु,मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत् ॥
मङ्गलं भगवान् वीरो,मङ्गलं गौतमः प्रभुः ॥
मङ्गलं स्थूलभद्राद्या, जैनधर्मस्तु मङ्गलम् ॥
सर्व--मङ्गल --माङ्गल्यं, सर्वकल्याणकारकम् ।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयतु शासनम् ॥

घण्टाकर्ण स्तोत्र

ॐ घण्टाकर्णो महावीरः, सर्वव्याधि-विनाशकः ।
विस्फोटकभयं प्राप्ते, रक्ष रक्ष महाबल ! ॥
यत्र त्वं तिष्ठसे देव ! लिखितोक्षरपंक्तिभिः ।
रोगास्तत्र प्रणश्यन्ति, वातपित्तकफोद्भवाः ॥
तत्र राजभयं नास्ति, यान्ति कर्णेजपाः क्षयम् ।
शाकिनी-भूतवेताला, राक्षसाः प्रभवन्ति न ॥
नाकाले मरणं तस्य, न च सर्पेण दृश्यते ।
अग्नि-चोरभयं नास्ति ॐ ह्रीं श्रीं घण्टाकर्ण ! ॥
नमोऽस्तु ते ॐ नरवीर ! ठः ठः ठः स्वाहा ॥

नोट -स्तोत्र का २१ बार जाप करने से राजभय

चोरभय आदि सब प्रकार के भय दूर होते हैं।

वैराग्य - लहर

भजन करन को आलसी, भोजन को होश्यार।
तुलसी ऐसे नरन को, वार वार धिक्कार॥
सुख सब को अनुकूल है, दुख सब को प्रतिकूल।
दया धर्म है इसलिए, सब धर्मों का मूल॥
देता भावे भावना, लेता करे सन्तोष।
वीर कहे सुन गोयमा! सीधा जावे मोक्ष॥
दया सुखों की वेलडी, दया सुखों की खान।
अनन्त जीव मुक्ते गयां, दया तणां फल जान॥
हिंसा दुख की वेलडी, हिंसा दुख की खान।
अनन्त जीव नरके गया, हिंसा ताणां फल जान॥
चेतो रे भव प्राणिया!, यह संसार असार।
स्थिरता कुछ दीसे नहीं, धन जोवन परिवार॥
धर्म करो तुम प्राणिया!, धर्म थकी सुख होय।
धर्म करन्ता जीव ने, दुखी न दीठा कोय॥
जीव दया पाली सही, पाली है छह काय।

यमता घर का पाहुना, मीठे भोजन खाय ॥
जीव दया पालो नहीं, पाली नहीं छह काय ।
सूने घर का पाहुना; जिम आयो तिम जाय ॥
धर्म करत संसार सुख धर्म करत निर्वान ।
धर्म पन्थ साधे बिना, नर तिर्यंच समान ॥
जहां दया तहां धर्म है, जहां लोभ तहां पाप ।
जहां क्रोध तहां काल है, जहां क्षमा तहां आप ॥
क्षमा तुल्य कोई तप नहीं, सुख संतोष समान ।
नहीं तृष्णा सम व्याधि है, धर्म दया सम आन ॥
दुख में सुमरण सब करें, सुख में करे न कोय ।
जो सुख में सुमरन करे, दुख काहे को होय ॥
देह धरे का दण्ड है सब काहु को होय ।
ज्ञानी काटे ज्ञान से, मूर्ख काटे रोय ॥
सच्चे आत्म-ज्ञान बिन दुख न कभी नसाय ।
कोटी यत्न करते रहो, तम बिन दीप न जाय ॥

॥ भक्तामर स्तोत्र भाषा ॥

॥ दोहा ॥

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार ।
धर्म धुरन्धर परम गुरु, नमो आदि अवतार ॥

॥ चौपाई ॥

सुरनत मुकट रतन छवि करैं,
अन्तर पाप तिमिर सब हरैं।
जिनपद वन्दों मन वच काय,
भव जल पतित उधारन सहाय ॥
श्रुतिपारग इन्द्रादिक देव,
जाकि थुति कीनी कर सेव।
शब्द मनोहर अर्थ विशाल,
तिस प्रभुकी वरनौं गुनमाल ॥
विबुधवंद्यपद मैं मतिहीन,
होय निलज थुति-मनसा कीन।
जल प्रतिबिम्ब बुद्ध को गहै,
शशि मण्डल बालक ही चहै ॥
गुन-समुद्र तुम गुन अविकार,
कहत न सुरगुरु पावे पार।
प्रलय पवन उद्धत जलजन्तु,
जलधि तिरै को भुजबलवन्तु ॥

छिपहु न लुपहु राहुकी छांहि,
जग-प्रकाशक हो छिनमाहिं।
धन अनवर्त्त दाह विनिवार,
रवितैं अधिक धरो गुनसार॥
सदा उदित विदलित तममोह,
विघटित मेघ राहु अवरोह।
तुह मुख कमल अपूरवचंद,
जगत विकाशी जोति अमंद॥
निशिदिन शशि रविको नहीं काम,
तुम मुखचंद हरै तमधाम।
जो स्वभावतैं उपजै नाज,
सजल मेघतैं कौनहु काज॥
जो सुबोध सोहै तुम माहिं,
हरि, हर आदिक में सो नाहिं।
जो दुति महारतन में होय,
काचखंड पावै नहिं सोय॥

असराल विदारण हाथ हटे,
गल लोल जहां गज कुंभ घटे।
मृगराज महाभय भ्रांति मिटे,
रसना जिन नायक जेह रटे॥
फरतो चहुँ फेर फुंकार फणी,
धरणेन्द्र धसैं धरि रीस घणी।
भय त्रास न व्यापे तेह तणी,
धरतां चित्त पार्श्व नाथ धणी।
कफ कुष्ठ जलोदर रोग कसे,
गड़ गुंवड़ देह अनेक ग्रसे।
विन भेषज व्याधि सब विनसे,
वामासुत पार्श्व के स्तव से॥
धरणेन्द्र धराधिप सुर ध्यायो,
प्रभु पार्श्व-पार्श्व कर पायो।
छवि रूप अनुपम जग छायो,
जननी धन वामासुत जायो॥
करतां जिन जाप संताप कटे,

दीनदयाल ! देवो मुझे, श्रद्धा शील संतोष ॥
आत्म-निंदा शुद्ध भली, गुणवंत वंदन भाव ।
राग द्वेष पतला करी, सब से खिमत खिमाव ।
छूटूं पिछले पाप से, नवां न बांधूं कोय ।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय ॥
परिग्रह ममता तजी, पांच महाव्रत धार ।
अंत समय आलोचना, करूं संथारो सार ॥
तीन मनोरथ ए कह्या, जो ध्यावे नित्य मन्न ।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिवसुख धन्न ॥
अरिहंत देव निर्ग्रंथ गुरु, संवर निर्जरा धर्म ।
केवलि-भाषित शास्त्र यह, जैन धर्म का मर्म ॥
आरंभ विषय कषाय तज, शुद्धसमकित व्रत धार ।
जिन-आज्ञा प्रमाण कर, निश्चय खेवा पार ॥
क्षण निकमो रहना नहीं, करना आतम काम ।
भणनो गुननो सीखनो, रमनो ज्ञान आराम ॥
अरिहंत सिद्ध सब साधुजी, जिन-आज्ञा धर्मसार ।
मांगलिक उत्तम सदा, निश्चय शरणा चार ॥

आरंभ विषय कषाय वश, भमियो काल अनंत ।
लाख चौरासी योनि से, अब तारो भगवंत ॥
देव गुरु धर्म सूत्र में, नव तत्त्वादिक जोय ।
अधिका ओछा जो कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय ॥
मोह अज्ञान मिथ्यात्व को; भरियो रोग अथाग ।
वैद्यराज गुरु शरण थी, औषध ज्ञान वैराग ॥
जो मैं जीव विराधिया, सेवे पाप अठार ।
प्रभु तुह्मारी साख से, बार-बार धिक्कार ॥
बुरा-बुरा सब को कहे, बुरा न दीसे कोय ।
जो घट शोधूं आपना, मुझ सा बुरा न कोय ॥
कहने में आवे कहां, अवगुण भरे अनंत ।
घट-घट अन्तर्यामी तुम, जानो श्री भगवंत ॥
करुणानिधे ! कृपा करी, कठिन कर्म मम छेद ।
मोह अज्ञान मिथ्यात्व का, करिये ग्रंथि-भेद ॥
पतित उद्धारण नाथ जी, अपनो विरुद विचार ।
भूल चूक सब माहरी, खमिये वारंवार ॥
क्षमा करो सब माहरा, आज तलक रा दोष ।

दीनदयाल ! देवो मुझे, श्रद्धा शील संतोष ॥
आत्म-निंदा शुद्ध भनी, गुणवंत वंदन भाव ।
राग द्वेष पतला करी, सब से खिमत खिमाव ॥
छूटूं पिछले पाप से, नवां न बांधूं कोय ।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय ॥
परिग्रह ममता तजी, पांच महाव्रत धार ।
अंत समय आलोचना, करूं संथारो सार ॥
तीन मनोरथ ए कह्या, जो ध्याये नित्य मन्न ।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिवसुख धन्न ॥
अरिहंत देव निर्ग्रंथ गुरु, संवर निर्जरा धर्म ।
केवलि-भाषित शास्त्र यह, जैन धर्म का मर्म ॥
आरंभ विषय कषाय तज, शुद्धसमकित व्रत धार ।
जिन-आज्ञा प्रमाण कर, निश्चय खेवा पार ॥
क्षण निकमो रहना नहीं, करना आत्म काम ।
भणनो गुननो सीखनो, रमनो ज्ञान आराम ॥
अरिहंत सिद्ध सब साधुजी, जिन-आज्ञा धर्मसार ।
मांगलिक उत्तम सदा, निश्चय शरणा चार ॥

घड़ी-घड़ी पल-पल सदा, प्रभु सुमरण को चाव ।
नर-भव सफलो जो करे, दान शील तप भाव ॥
सिद्धां जैसा जीव है, जीव सोई सिद्ध होय ।
कर्म मैल का अंतरा, बूझे विरला कोय ॥
कर्म पुद्गल रूप हैं, जीव-रूप है ज्ञान ।
दो मिल कर बहुरूप हैं. बिछड्यां पद निर्वाण ॥
जीव कर्म भिन्न-भिन्न करो, मनुष्य जन्म को पाय ।
ज्ञानातम वैराग्य से, धीरज ध्यान जगाय ॥
द्रव्य थकी जीव एक है, क्षेत्र असंख्य प्रमान ।
काल थकी सर्वदा रहे, भावे दर्शन ज्ञान ॥
गर्भित पुद्गल पिंड में, अलख अमूरत देव ।
फिरे सहज भवचक्र में, यह अनादि की टेव ॥
फूल अतर घी दूध में, तिल में तेल छिपाय ।
चेतन जड़ ज्यूं कर्म संग, बंध्यो ममत दुख पाय ॥
जो-जो पुद्गल की दशा, ते निज माने हंस ।
याही भरम विभावतें, बढे कर्म को बंस ॥
रत्न बंध्यो गठड़ी विषे, सूर्य छिप्यो घन मांहि ।

सिंह जो पिंजरा में दियो, जोर चले कुछ नांहि ॥
बंदर मदिरा पीव ज्यूं, बिच्छू डंकित गात।
भूत लग्यो कौतुक करे, त्यूं कर्मन उत्पात ॥
जीव कर्म संग मूढ है, पावे नाना रूप।
कर्मरूप मल के टले, चेतन सिद्ध स्वरूप ॥
चेतन उज्ज्वल द्रव्य है, रह्यो कर्ममल छाय।
तप संयम से धोवतां, ज्ञानज्योति बढ़ जाय ॥
ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप।
चारित्र थी आवत रुके, तपस्या तपन स्वरूप ॥
कर्मरूप मल के शुधे, चेतन चांदी रूप।
निर्मल ज्योति प्रगट भये, केवल ज्ञान अनूप ॥
मूसी पावक सोहगी, फूंकां तनो उपाय।
राम चरण चारों मिले, मैल कनक को जाय।
कर्मरूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चन्द।
ज्ञानरूप गुण चान्दनी, निर्मल ज्योति अमन्द ॥
राग द्वेष दो बीज से, कर्मबंध की व्याध।
ज्ञानातम वैराग्य से, पावे मुक्ति समाध ॥

अवसर वीत्यो जात है, अपने वस कछु होत।
पुण्य छतां पुण्य होत है, दीपक दीपक ज्योत ॥
कल्पवृत्त चिंतामणि, इस भव में सुखकार।
ज्ञानवृद्धि इनसे अधिक, भवदुःख भंजनहार ॥
राई मात्र घट वध नहीं, देख्यां केवलज्ञान।
यह निश्चय कर जान के, तजिये प्रथम ध्यान ॥
दूजा कभी न चिंतिये, कर्मबंध बहु दोप।
तीजा चौथा ध्याय के, करिए मन संतोप ॥
गई वस्तु सोचे नहीं. आगम वांछा नांहि।
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग मांहि ॥
अहो समदृष्टि जीवडा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अंतर्गत न्यारा रहे, ज्यूं धाई खिलावे बाल ॥
सुख-दुख दोनों बसत हैं, ज्ञानी के घट मांहि।
गिरिसर दीखे मुकुर में, भार भीजवो नांहि ॥
जो-जो पुद्गल फरसना, निश्चय फरसे सोय।
ममता समता भाव से, कर्म बंध त्तय होय ॥
बांध्यां सोही भोगवे, कर्म शुभाशुभ भाव।

फल से निर्जरा होत है, यह समाधि चित्त चाव ॥
बांध्या बिन भुगते नहीं, बिन भुगत्यां न छुड़ाय ।
आप ही करता भोगता, आप ही दूर कराय ॥
पथ कुपथ घट वध करी, रोग हानि वृद्धि थाय ।
ज्यूँ पुण्य पाप क्रिया करी, सुख दुख जग में पाय ॥
सुख दियां सुख होत है, दुःख दियां दुख होय ।
आप हने नहीं और को, तो आपा हने न कोय ॥
ज्ञान गरीबी गुरु वचन, नरम वचन निर्दोष ।
इनको कभी न छोड़िए, श्रद्धा शील संतोष ॥
सत मत छोड़ो हे नरा !, लक्ष्मी चौगुनी होय ।
सुख-दुःख रेखा कर्म की, टारी टरे न कोय ॥
गोधन गजधन रत्नधन, कंचन खान सुखान ।
जब आवे संतोष धन, सब धन धूल समान ॥
शील रतन मोटा रतन, सब रतनों की खान ।
तीन लोक की संपदा, रही शील में आन ॥
शीले सर्प न आभड़े, शीले शीतल आग ।
शीले हरि करी केसरी, भय जावे सब भाग ॥

काम भोग प्यारा लगे, फल किंपाक समान।
मीठी खाज खुजावतां, पीछे दुःख की खान॥
जप तप संयम दोहिलो, औषध कड़वी जान।
सुख कारण पीछे घनो, निश्चय पद निर्वाण॥
डाभअणी जलबिन्दुवा, सुख विषयन को चाव।
भवसागर दुःख जल भरा, यह संसार स्वभाव॥
चढ उत्तंग जहां से पतन, शिखर नहीं वो कूप।
जिस सुख अन्दर दुःख बसे, सो सुख भी दुःख रूप॥
जब लग जिन के पुण्य का, पहुंचे नहीं करार।
तब लग उसको माफ है, अवगुण करे हजार॥
पुण्य क्षीण जब होत हैं, उदय होत हैं पाप।
दाजे वन की लाकड़ी, प्रजले आपो आप॥
पाप छिपाया न छिपे, छिपे तो मोटा भाग।
दाबी दूबी न रहे, रूई लपेटी आग॥
बहु बीती थोड़ी रही, अब तो सुरत सँभार।
परभव निश्चय चालना, वृथा जन्म मत हार॥

चार कोस ग्रामांतरे, खरची बांधे लार ।
परभव निश्चय जावना, करिये धर्म विचार ॥
रज्जब रज ऊंची गई, नरमाइ के पान ।
पत्थर ठोकर खात हैं, करडाइ के तान ॥
अवगुण उर धरिए नहीं, जो होवे वृक्ष ववूल ।
गुन लीजे कहां लग कहे, नहीं छाया में सूल ॥
जैसी जा पे वस्तु है, वैसी दे दिखलाय ।
वा का बुरा न मानिए, वो लेन कहां से जाय ॥
गुरु कारीगर सारिखा, टांची वचन विचार ।
पत्थर से प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार ॥
सन्तन की सेवा कियां, प्रभु रीझत हैं आप ।
ता का वाल खिलाइए, ता का रीझत वाप ॥
भवसागर संसार में, द्वीप श्री जिनराज ।
पहुंचे तीर उद्यम करी, वैठी धर्म जहाज़ ॥
निज-आतम को दमन कर, पर-आतम को चीन ।
परमातम का भजन कर, सोई मत परवीन ॥

समझूं शके पाप से, अणसमझू हरपंत ।
वे लूखा वे चीकना, इणविध कर्म बधन्त ॥
समझू सार संसार में, समझू टाले दोष ।
समझ-समझ कर जीव ही, गया अनन्ता मोक्ष ॥
उपशम विषय कषायनो, संवर तीनो योग ।
क्रिया जतन विवेक से, मिटें कर्म के रोग ॥
रोग मिटे समता वधे, समकित व्रत आधार ।
निर्वैरी सब जीव को, पावे मुक्ति समाध ॥
अनंत चौवीसी ते नमो, सिद्ध अनंता कोड ।
केवल ज्ञानी स्थविर सभी, वंदुं वे कर जोड ॥
गणधरादिक सब साधुजी, समकितव्रत गुणधार ।
यथा योग्य वंदन करूं, जिनआज्ञा अनुसार ॥
मैं अपराधी गुरुदेव को, तीन भवन को चोर ।
ठगूं वंगाना माल में, हाहा कर्म कठोर ॥
कामी कपटी लालची, अपछंदा अविनीत ।
अविवेकी क्रोधी कठिन, महापापी * रणजीत ॥

*पढ़ने वाले को यहां अपना नाम बोलना चाहिए ।

थापनमोसा मैं किया, कर विश्वास का घात।
परनारी धन चोरिया, प्रकट कह्यो नहीं जात ॥
श्रद्धा अशुद्ध प्ररूपणा, करी फरसना सोय।
जान अजान पक्षपात में, मिच्छा दुक्कडं मोय ॥
सूत्र अर्थ जानूं नहीं, अल्पबुद्धि अनजान।
जिन भाषित सब शास्त्र यह, अर्थ पाठ परमान ॥
हूँ मुगसेलिया हो रह्या, नहीं ज्ञान रस भीज।
गुरु सेवा न कर सकूँ, किम मुज कारज सीज ॥
जैनधर्म शुद्ध पाय के, वरते विषय कषाय।
यह अचंभा हो रहा, जल में लागी लाय ॥
जितनी वस्तु जगत में, नीच-नीच से नीच।
सब से मैं पापी बुरा, फंसूं मोह के बीच ॥
एक कनक और कामिनी, दो मोटी तलवार।
उठा था जिन—भजन को, बीच में लीनो मार ॥
त्यागन कर संग्रह करूं, जैसे वमन आहार।
तुलसी ए मुझ पतित कूं, वारवार धिक्कार ॥

नहीं विद्या नहीं वचन वल, नहीं धीरज गुण ज्ञान ।
तुलसीदास ग़रीव की, पत राखो भगवान ! ॥
कहा भयो घर छोड़ के, तज्यो न माया संग ?
नाग तजी जिम काँचली, विप नहीं तजियो अंग ॥
शासन-पति वर्द्धमान जी !, तुम लग मेरी दौड़ ।
जैसे समुद्र जहाज़ विन, सूजत और न ठौर ॥
भव-भ्रमण संसार-दुःख, ता का वार न पार ।
निर्लोभी सद्‌गुरु विना, कौन उतारे पार ॥
निश्चल चित्त शुद्ध मुख पढत, तीन योग थिर थाय ।
दुर्लभ दीसे कायरा, हलु कर्मी चित्त भाय ॥
अक्षर पद हीना अधिक, भूल चूक कही होय ।
अरिहंत सिद्ध आतम साख से, मिच्छा दुकड़ं मोय ॥

बारह भावना

१-अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार ।

मरना सब को एक दिन, अपनी अपनी बार ॥

२–अशरण भावना

दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती विरियां जीव को, कोई न रखनहार ॥

३–संसार भावना

दाम विना निर्धन दुःखी, तृष्णा-वश धनवान।
कहीं न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥

४–एकत्व भावना

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यों कबहूँ या जीव को, साथी सगो न कोय ॥

५–अन्यत्व भावना

जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
घर संपति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय ॥

६–अशुचि भावना

दिपे चाम चादर मढी, हाड पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन-गेह ॥

७–आस्रव भावना

ग—वासी घूमे सदा, मोह नींद के जोर ।
सब लूटे नाहिं दीसता, कर्म चोर चहुं ओर ॥

८–संवर भावना

मोह नींद जब उपशमे, सत्गुरु देय जगाय ।
कर्म चोर आवत रुके, तब कुछ बने उपाय ॥

९–निर्जरा भावना

ज्ञान दीप तप तेल भर, घर शोधे भ्रम छोर ।
या विधि विन निकसे नहीं, पैठे पूरव चोर ॥
पांच महाव्रत संचरण, समिति पंच प्रकार ।
प्रवल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार ॥

१०–लोक भावना

चौदह राजू उत्तंग नभ, लोक-पुरुष संठान ।
ता में जीव अनादि तें, भरमत है विन ज्ञान ॥

११–बोधिदुर्लभ भावना

धन जन कंचन राज सुख, सबहिं सुलभ कर जान ।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान ॥

धन* वनिता पर न लुभाऊं, संतोपामृत पिया करूं।
हंकार का भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूं,
ब दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूं।
; भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूं,
रे जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं।
त्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे,
न, दुःखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा-स्रोत बहे।
र्जन, क्रूर कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे,
म्यभाव रक्खूं मैं उनपर, ऐसी परिणति हो जावे।
णी जनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड आवे,
रे जहां तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।
ऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
ण-ग्रहण का भाव रहे नित्य, दृष्टि न दोषों पर जावे।
ई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
खों वर्षों तक जीऊं या, मृत्यु आज ही आजावे।
थवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,

*महिलाएं 'वनिता' की जगह भर्ता पढ़ें।

तो भी न्यायमार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ।
हो कर सुख में मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे,
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावे।
रहे अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे,
इष्टवियोग अनिष्टयोग में सहनशीलता दिखलावे ।
सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न
वैर, पाप, अभिमान छोड़ जग,नित्य नये म
घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर
ज्ञानचरित्र उन्नत कर अपना,मनुजजन्म
ईति भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय
धर्मनिष्ठ हो कर राजा भी, न्याय प्रजा
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांति से
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्व
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मु
बन कर सब 'युगवीर' हृदय से,
वस्तुस्वरूप विचार खुशी से,सब दुःख

उपसर्गहर स्तोत्र

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं ।
विसहरविस—निन्नासं, मंगलकल्लाण—आवासं ॥
विसहर-फुलिंग-मंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ ।
तस्स गह-रोग-मारी-दुट्ठजरा जंति उवसामं ॥
चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ ।
नरतिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्खदोगच्चं ॥
तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणिकप्पपायवब्भहिए ।
पावंति अविग्घेणं, जीवा, अयरामरं ठाणं ॥
इअ संथुओ महायस ! भत्तिब्भरनिब्भरेण हियएण।
ता देव ! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पास ! जिणचंद ! ॥

सूचना-इस स्तोत्र के निर्माता हैं-चौदहपूर्वी श्री भद्रबाहु स्वामी। स्तोत्र अपूर्व प्रभाव को लिये हुए है। इस का मूल बीज मंत्र है-नमिऊण पास विसहर वसह जिण फुलिंग । किसी भी भीषण संकट के आने पर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख कर के बैठ जाना

किलामिया उद्दविया ठाणाओ ठाणं संकामिया जीवियाओ ववरोविया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

उत्तरी-करण सूत्र

तस्स उत्तरी—करणेणं, पायच्छित्त—करणेणं, विसोही-करणेणं, विसल्ली-करणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउसग्गं।

आगार सूत्र

अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं छीएणं जंभाइएणं उड्डुएणं वायनिसग्गेणं भमलीए पित्त-मुच्छाए सुहुमेहिं अंगसचालेहिं सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउसग्गो जाव अरिहंन्ताणं भगवन्ताणं नमुक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

चतुर्विंशति-स्तवसूत्र

लोगस्स उज्जोयगरे धम्मतित्थयरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं चउविसं पि केवली॥

खड़े हो कर कायोत्सर्ग—ध्यान में लोगस्स—एक वार "नमो अरिहंताणं" पढ़ कर ध्यान खोलना। प्रगट रूप में लोगस्स—एक वार। दाहिना घुटना टेक कर बायां खड़ा कर उस पर अंजलिबद्ध दोनों हाथ रख कर प्रणिपातसूत्र=नमोत्थुणं—दो वार। सामायिक-संमाप्ति पाठ=एयस्स नवमस्स—एकवार।

मन के दश दोष

अविवेकजसोकित्ती, लाभत्थी गव्व-भय-नियाणत्थि।
संसयरोसअविणओ, अवहुमाणए दोसा भाणियव्वा।

१. अविवेक=सामायिक में समय और असमय आदि किसी भी प्रकार के औचित्य या अनौचित्य का ध्यान न रखना।

२. यशः कीर्ति=लोक-सन्मान के लिये सामायिक करना।

३. लाभार्थ=व्यापार आदि में धन आदि के लाभ की कामना से सामायिक करना।

ऐसा कहना चाहिए।

४. गर्व=मेरे समान कौन सामायिक कर सकता है ? इत्यादि अभिमान से सामायिक करना।

५. भय=लोकनिन्दा, राजदण्ड आदि के भय से सामायिक करना।

६. निदान=किसी भी सांसारिक सुख की प्राप्ति के लिये सामायिक का फल बेचना।

७. संशय=सामायिक का फल मिलेगा या नहीं ? मन में ऐसा सन्देह रखना।

८. रोष=सामायिक में क्रोध, मान, माया और लोभ करना अथवा लड़-झगड़ या रूठ कर सामायिक करना।

९. अविनय=सामायिक के प्रति आदर एवं सम्मानभाव का रखना।

१०. अबहुमान = सभक्तिभाव और सोत्साह सामायिक न कर के किसी के दबाव से या वेगार समझ कर सामायिक करना।

दश वचन के दोष

कुवयण सहसाकारे,
सछंद संखेय कलहं च ।
विगहा विहासोऽशुद्धं,
निरवेक्खो मुणमुणा दोसा दस ।

१. कुवचन=सामायिक में अशिष्ट वचन बोलना ।
२. सहसाकार=सामायिक में बिना विचारे सहसा हानिकर और असत्य वचन बोलना ।
३. स्वछन्द=सामायिक में काम-वर्धक गन्दे गीत गाना ।
४. संक्षेप=सामायिक का पाठ संक्षेप में बोलना ।
५. कलह=सामायिक में क्लेशोत्पादक वचन बोलना ।
६. कलह=व्यर्थ ही मनोरञ्जन की दृष्टि से स्त्रीकथा, भक्तकथा, राजकथा और देशकथा करते रहना ।
७. हास्य=सामायिक में मूर्खतापूर्ण हंसना ।
८. अशुद्ध=सामायिक के पाठों को अशुद्ध बोलना ।

९. निरपेक्ष=सामायिक में शास्त्र की उपेक्षा करके अथवा असावधानी से वचन बोलना।
१०. मुम्मुन=सामायिक के पाठों को गुनगुनाते हुए अस्पष्ट उच्चारण करना।

बारह काया के दोष

कुआसणं चलासणं चलादिट्ठि,
सावज्जकिरियालंबणाकुञ्चण-पसारणं।
आलस--मोडन--मलविमासणं,
निद्दा वेयावच्चं त्ति बारस कायदोसा।

१. कुआसन=सामायिक में पैर पर पैर चढाकर अभिमान से बैठना अर्थात् आसन के औचित्य का कुछ भी ध्यान न रखना।
२. चलासन=सामायिक में बार-बार आसन को बदलते रहना।
३. चल-दृष्टि=सामायिक में कभी इधर तो कभी उधर देखते रहना अर्थात् अपनी दृष्टि को कदापि स्थिर न रखना।

४. सावद्यक्रिया=सामायिक में पाप-युक्त क्रियायें करना, कराना और घर आदि की रखवाली आदि करना।

५. आलंबन=निष्कारण दीवार आदि का सहारा लेना।

६. आकुञ्चन-प्रसारण-=निष्प्रयोजन हाथों-पैरों को सिकोड़ना या फैलाना।

७. आलस्य=सामायिक में अंगडाइऐं लेते रहना।

८. मोडन=सामायिक में हाथों-पैरों की उंगलियां चटकाते रहना।

९. मल=सामायिक में मल उतारते रहना।

१०. विमासन=विना पूछे शरीर खुजलाना या रात्रि में इधर-उधर आना-जाना या शोकग्रस्त की भांति बैठे रहना।

११. निद्रा=सामायिक में बैठे हुए ऊंघते रहना।

१२. वैयावृत्य=सामायिक में निष्कारण ही सेवा कराना।

अरिहंत-वंदना

नमो श्री अरिहंत कर्मों का किया अन्त,
हुआ सो केवलवंत करुणा भण्डारी है।
अतिशय चौतीस धार पैंतीस वाणी उचार,
समभावें नर-नार पर-उपकारी है।
शरीर सुन्दराकार सूर्य सो झलकार,
गुण हैं अनन्तसार दोष परिहारी है।
कहत हैं त्रिलोक ऋषि मन वचन काया करि,
झुक-झुक बारम्बार वंदना हमारी है।

सिद्ध-वन्दना

कल कर्म टाल वश कर लियो काल,
मुक्ति में रहा माल आत्मा को तारी है।
खत सकल भाव हुआ है जगत राव,
सदा ही क्षायिक भाव भय अविकारी है।
चल अटल रूप आवे नहीं भव कूप,
अनूप स्वरूप ऊप ऐसे सिद्धधारी है।

कहते हैं त्रिलोक ऋषि बताओ ए वास प्रभु,
सदा ही उगत सूर वंदना हमारी है।

आचार्य-वंदना

गुण हैं छत्तीस पूर धारत धर्म उर,
मारत कर्म क्रूर सुमति विचारी है।
शुद्ध सो आचारवंत सुन्दर हैं रूपकंत,
भण्या सभी सिद्धांत वांचनी सुप्यारी है।
अधिक मधुर वयन कोई नहीं लोपे कैन,
सकल जीवों का सयन कीर्ति अपारी है।
कहत हैं त्रिलोक ऋषि हितकारी देत सीख,
ऐसे आचार्य जी को वन्दना हमारी है।

उपाध्याय-वंदना

पढ़त इग्यारा अंग कर्मों से करे जंग,
पाखंडी का मान भंग करन हुशियारी है।
चौदह पूर्व धार जानत आगम सार,
भवियन के सुखकार भ्रमता निवारी है।

काट के ज्यूं सूत्रधार, हेम जैसे सुनियार
माटी के जो कुम्भकार, पात्र करे त्यारी है ।
धरती को किसान जान, लोह को लुहार मान,
शिलावाट शिला आन, घाट घडे भारी है ।
कहत हैं त्रिलोक ऋषि, सुधारे ज्यूं गुरु शीष,
गुरु उपकारी, नित लीजे वलिहारी है ।
गुरु मित्र गुरु मात, गुरु सगा गुरु तात,
गुरु भूप गुरु भ्रात, गुरु हितकारी है ।
गुरु रवि गुरु चन्द्र, गुरु पति गुरु इन्द्र,
गुरु-देव दे आनंद, गुरु पद भारी है ।
गुरु देत ज्ञान ध्यान, गुरु देत दान मान,
गुरु देत मोक्ष थान, सदा उपकारी है ।
कहते हैं त्रिलोक ऋषि भली भली देत सीख,
पल-पल गुरु जी को वंदना हमारी है ।

प्रातः कथा के वाद का स्तवन

षट्द्रव्य भिन्न २ कह्या जी जिनवर आगम सुनत व्याख्यान
पंचास्तिकाया नव पदार्थ पंच भाख्या ज्ञान ।

चारित्र तेरह कहा जी जिनवर ज्ञान दर्शन प्रधान।
जोशास्त्र नित्य सुनो भविक जन आन शुद्धमन ध्यान।
चौबीस तीर्थंकर लोक मांहीं तरन तारन जहान।
नव वासु नव प्रतिवासु देवा बारह चक्रवर्ती जान॥
बलदेव नव सब हुआजी त्रेसठ धन्य गुणधारी खान।
जो शास्त्र नित्यसुनो भविक जन आन शुद्ध मन ध्यान
चार देशना दी थी जिनवर कियो जी पर उपकार।
पांच अणुव्रत चार शिक्षा तीन गुण व्रत धार॥
पांच संवर जिनेश्वर भाष्या दया जो धर्म प्रधान।
जो शास्त्र नित्यसुनो भविक जन आन शुद्ध मन ध्यान।
और कहां लग करूं जी वर्णन तीन लोक प्रमाण।
सुनत पाप विनाश जायें पायें पद निर्वान॥
देव वैमानिक मांहीं पदवी कहिए जो पंच प्रधान।
जो शास्त्र नित्य सुनो भविक जन आन शुद्ध मन ध्यान

कलश—विघ्न हरण मङ्गल करण, धन्य श्री जैन धर्म।
जिन सिमरियां पातक टलें, टूटें आठों कर्म॥

वेमि, मणसा वयसा कायसा, तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

पौषध व्रत पारने का पाठ

ग्यारहवां पौषध व्रत-विषय पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तंजहा ते आलेऊं-अप्पडिलेहिए दुप्पडिलेहिए सिज्जासंथारए, अप्पमज्जिए दुप्पमज्जिए सिज्जासंथारए, अप्पडिलेहिए दुप्पडिलेहिए उच्चारपासवण-भूमि, अप्पमज्जिए दुप्पमज्जिए उच्चारणपासवण—भूमि, पोसहोववासस्स सम्मं अणणुपालणाए, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

संवर करने का पाठ

द्रव्य से पांच आस्रव सेवन का पच्चक्खाण, क्षेत्र* से...... काल से...भाव से उपयोग सहित, गुण से

---

*जितने क्षेत्र की मर्यादा करनी हो उतने क्षेत्र का परिमाण कह देना चाहिए।

‡जितने समय का संवर करना चाहो उतने समय का परिमाण पाठ के साथ ही कह डालना चाहिए।

सप्त कुव्यसन-निषेध

१. शिकार खेलना। २. जुआ-शर्त लगा कर ताश आदि खेलना। ३. चोरी करना। ४. मांस-भक्षण। ५. मदिरापान। ६. परस्त्रीगमन और ७. वेश्यागमन।

नोट-प्रत्येक मनुष्य को इन सातों कुव्यसनों का जीवन भर के लिये त्याग करदेना चाहिये। इनका त्याग करने से ही मानव कल्याण-मार्ग का पथिक हो सकता है अन्यथा नहीं।

श्रावक के तीन मनोरथ

पहले मनोरथ(अभिलाषा)में श्रावक यह विचार करे कि वह पवित्र दिन कब होगा कि जब मैं संसार हित के लिये अपने धन-वैभव के परिग्रह (ममता) का त्याग करूंगा, अपनी स्थावर और जंगम संपत्ति का अनाथों, असहायों और दुःखियों की रक्षा के लिए उपयोग करूंगा। परिग्रह ही एक ऐसा कडा बन्धन है जो आत्मा को आध्यात्मिकता से कोसों दूर रख

कर सांसारिक महत्त्वाकांक्षाओं में आसक्त बनाए रखता है। अस्तु, जिस दिन मैं इस परिग्रह को लोक-हित के लिये त्याग कर अपने दूषित मानस को त्याग के जल से विशुद्ध बनाऊँगा वह दिन मेरे लिये परम मांगलिक और कल्याणकारी होगा।

दूसरे मनोरथ में श्रावक यह विचार करे कि वह मंगल दिन कब होगा कि जब मैं विषय-वासना की भीषण शृंखलाओं को तोड़-मरोड़ कर फेंक दूंगा और धर्म-जल से अपने मानस-सर को सर्वथा विशुद्ध बना कर साधु-जीवन स्वीकार करूंगा।

तीसरे मनोरथ में श्रावक यह विचार करे कि वह पावन दिन कब होगा कि जब मैं साधु-जीवन को सोत्साह, सम्यक्तया तथा निर्दोष पूर्ण कर अन्त समय आलोचना(प्रायश्चित ग्रहण करने के लिये अपने दोषों का गुरु महाराज को बताना), निन्दना (आत्म-साक्षी में दोषों के लिये किया गया पश्चा-त्ताप) और गर्हणा (दूसरे के सामने प्रकट रूप में

अपने पापाचरण को धिक्कारना) कर संथार*ग्रहण करूंगा, और आहारादि के समस्त ममत्व से छुटकारा पाकर वीतरागभाव की पराकाष्ठा को उपलब्ध कर अपने को आत्मभावना में लगाऊंगा वह दिन मेरे लिये परम मांगलिक और कल्याण-कारी होगा।

चौदह-नियम

१. सचित्त—जीवसहित वस्तु अर्थात् कच्चा पानी फल, फूल, मूल, बीज आदि। २. द्रव्य-रोटी, दाल, भात आदि द्रव्य। ३. विगय,—दूध, दही, घी, तेल आदि। ४. उपानत्-जूते, चप्पल, आदि। ५. तम्बूल मुखवास पान, सुपारी आदि। ६. वस्त्र—पहनने ओढने के सब वस्त्र। ७: कुसुम—सूंघने की वस्तु

---

*संथार (संस्तार) एक प्रकार का आसन होता है, जिस पर बैठ कर सामायिक पौषध आदि सदनुष्ठान किए जाते हैं, किंतु प्रकृत में यह अर्थ

फूल, इतर आदि । ८. वाहन—घोड़ा, हाथी, जहाज, मोटर आदि । ९. शयन—पलंग, खाट, बिछौने आदि । १०. विलेपन—चन्दन, तेल उबटन आदि । ११. ब्रह्मचर्य-मैथुन का त्याग १२. दिशा—ऊंची नीची तिरछी आदि दिशा । १३. स्नान—स्नान आदि, १४. भक्त—मिष्टान्न आदि भोजन ।

सूचना—ऊपर लिखित चौदह वस्तुओं की आवश्यकता के अनुसार जितनी मर्यादा करनी हो उतनी कर लेने के पश्चात् शेष का त्याग कर लेना चाहिए । जितना भी त्याग होगा उतनी ही शान्ति होगी । चौदह नियमों से समुद्र जितना पाप घट कर बूंद के बराबर रह जाता है ।

२४ तीर्थंकरों के नाम

१. श्री ऋषभदेव जी २. श्री अजितनाथ जी

मान्य होने पर भी गौण है । यहां भी लक्षणा से उस आसन पर बैठ कर जो आमरण अनशन (व्रत) ग्रहण किया जाता है उसका ग्रहण करना इष्ट है ।

सुख और शान्ति मानव की
ये सर्वथा दूर भगाती हैं।
चैन कभी न लेने देतीं, सर्वदा ये कलपाती हैं॥
उनको शान्त बनाने की हैं, कही गई जल-धारा तीन।
जो न इनको वर्तेगा वह, रहेगा अग्नियोंके आधीन॥
पहली धारा कही श्रुत है, शास्त्र-आज्ञा भी है नाम।
आगम का अनुकरण जो करले,
उसको होता बड़ा आराम॥
दूसरी धारा शील की है जो,
कर लेगा इसका उद्योग।
उसे लगेंगे विष समान जो,
हैं संसार के विषय और भोग॥
तीसरी धारा तप की होती जो,
है उसको लेना धार।
क्रोध मान और माया लोभ की,
अग्नियों को देता है मार॥
अग्नियां फिर ये चारों उसपर,
कर न सकतीं अपना वार।

शान्त सदा वह फिर है रहता,
मिलता उसको सुख अपार ।
जो भी इन जल-धाराओं को,
अपने अन्दर लायेगा ॥
काम क्रोध और लोभ मोह की,
अग्नियां मार भगायेगा ॥

प्रश्न नं० ६

संयम-शील जो मानव होता,
क्या—क्या करता है वह त्याग ।
कौन से पाप का उसको स्वामिन् !,
करना होता है परित्याग ।

उत्तर

संयमी पुरुष है सबसे पहले हिंसा देता सारी छोड़ ।
दूसरे झूठ न बोलता है वह लेता है मुखउससे मोड़ ।
रे घृणा करे चोरी से पर-वस्तु नहीं उठाता है ।
मैथुन-क्रीड़ा से वह अपना आप हटाता है ॥

पांचवें वस्तु मिले यदि न, रोष कभी न करता है।
छठे लोभ के करने से वह सदाही रहता डरता है॥
इन दोषों को त्याग देवे,
वह संयमी पुरुष कहाता है॥
कर के पालन संयम का वह
सुख—शान्ति को पाता है।

प्रश्न नं० ७

ब्राह्मण जो है सच्चा होता, उसके चिह्न बता दीजे।
ब्राह्मण है किन गुणों से होता, कृपा कर समझा दीजे॥

उत्तर

इन्द्रियों को वश में रखता, राग-द्वेष न करता है।
हिंसा हर प्रकार की त्यागे, अत्याचार से डरता है॥
क्रोध लोभ या हास्य भय से, बोलता जो न झूठ कभी।
दिए बिना न किसी की, लेता छोटी मोटी वस्तु भी॥
मन, वाणी और काया से है,
करता मैथुन का जो त्याग।

काम भोग से रहे अलिप्त और,
विषयों से है जाता भाग ॥
आसक्त न हो संसार में जो और
कमल फूल के रहे समान ।
इतने गुणों का स्वामी जो हो,
ब्राह्मण उसको लेना जान ॥

प्रश्न नं० ८

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, कैसे ये बनजाते हैं ।
किस कारण से जुदाजुदा यह, इन वर्णों को पाते हैं ॥

उत्तर

करणी अपनी-अपनी ही से, क्षत्रिय, ब्राह्मण बन जाते ।
जैसे उनके कर्म हैं होते, वैसे ही हैं कहलाते ॥
कर्म से ब्राह्मण कर्म से क्षत्रिय,
बनता है यह लेना जान ।
कर्म से वैश्य और कर्म से शूद्र,
होता है यह रक्खो ध्यान ॥

जैसे होंगे कर्म किसी के, वैसा ही कहलाता है।
कर्मों पर है निर्भर जाति, जाति कर्म दिखाता है॥
कुल-विशेष या गृह-विशेष में, पैदा जो कोई होजाये।
उससे ऊंचा बन न सकता, उन्नता कर्म ही दिलवाये॥

प्रश्न नं० ९

नर का भव किन पुण्यों से,
है मिलता इस जग अन्दर आ।
परम कृपालो! गुरु–देव! जी,
यह भी अब दीजे फरमा॥

उत्तर

भावना जिन की शुद्ध, सरल हो,
मन में कोई विकार न हो।
किसी से द्वेष, विरोध न रक्खे,
किसी से झगड़ा रार न हो॥
दया-भाव हो सदा ही मन में,
कृत्य में अत्याचार न हो।

जैसे होंगे कर्म किसी के, वैसा ही कहलाता है।
कर्मों पर है निर्भर जाति, जाति कर्म दिलाता है॥
कुल-विशेष या गृह-विशेष में, पैदा जो कोई होजाये।
उससे ऊंचा बन न सकता, उच्चता कर्म ही दिलवाये॥

प्रश्न नं० ६

नर का भव किन पुण्यों से,
है मिलता इस जग अन्दर आ।
परम कृपालो! गुरु-देव! जी,
यह भी अब दीजे फरमा॥

उत्तर

भावना जिन की शुद्ध, सरल हो,
मन में कोई विकार न हो।
किसी से द्वेष, विरोध न रक्खे,
किसी से झगड़ा रार न हो॥
दया-भाव हो सदा ही मन में,
कृत्य में अत्याचार न हो।

किसी को धोखा छल न देवे,
खोटा कोई व्यवहार न हो ॥
निन्दा चुगली कभी न करते,
बोलें कभी न खोटे बोल।
सीधी सादी बात हैं करते,
निकले ना जो ढोल का पोल ॥
कुदृष्टि न जिनकी होती, काम के वस न होते हैं।
पुण्य-कर्म में लगे हैं रहते, पाप का बीज न बोते हैं ॥
धर्म कमाई करके धनका,
करते हैं वह सद्-उपयोग ।
कभी न लगने देते हैं वह
विषय-विकार का भीषण रोग ॥
ऐसे प्राणी जो ये सारे,
लेते हैं शुभ कर्म कमा ।
मानुष देह हैं फिर भी पाते,
अगले जन्म के अन्दर जा ॥

प्रश्न नं० १२

जा मन चाहे वह ही वस्तु, किन पुण्यों से पाते हैं।
कमी न कोई घर में आवे, सुख से समय बिताते हैं ।।

उत्तर

सब जीवों पर दया करे जो, कभी न अत्याचार करे।
निर्दयता के करने से जो, मन में अपने सदा डरे ।।

दुःखी देखकर जीवों को जो,
मन में दुःख मनाता है।
सुखी देखकर सुखी है होता,
मन उसका हर्षाता है ।।

पर-दुःख के वह दूर करन में, तनमन धन है देदेता।
दुःख-निवृत्ति करकेदुःखी की कामनाशुभ है लेलेता ।।

प्रश्न नं० १३

देखे जाते कई तो मानुष, आदर बहुत ही पाते हैं।
देवता और गन्धर्व आदिभी उनकोशीस झुकाते हैं।
किस करणी का फल यह उत्तम,
मानव—जीवन पाते हैं ।।

देख के जिनके मुख-मंडल को
हृदय-कमल खिल जाते हैं ॥

उत्तर

शील अखण्ड जो पालता है,
नर शुद्धाचारी बन जाता ।
दुराचार का भाव भी उसके,
मन में कभी न है आता ॥
नयनों में है लज्जा होती, वाणी में अति शुद्धि हो ।
भावना उसकी होय पवित्र, निर्मल उसकी बुद्धि हो ।
इसी पवित्रता के कारण, आदर उसका होता है ।
फल सन्मानका वोही पावे, शुद्धि-बीज जो बोता है ।
उस चारित्रवान के सन्मुख, देवता भी झुक जाते हैं ।
इन्द्रऔर गन्धर्व भी सारे, उसको शीस झुकाते हैं ॥

प्रश्न नं० १४

किस करणी के फल से प्राणी,
मन्त्री-पद को पाता है

जिस पदवी के कारण ही वह,
सन्मानित हो जाता है ॥

उत्तर

दूसरों को जो पूछने पर है; सम्मति शुभ देता बतला।
सन्मार्ग पर भ्रष्ट-जनों को, देता है जो नित्य लगा ॥
कुटिल-नीति न कभी बरतता,
करता न है दंभ या छल।
धोखा किसी को देता न है,
खोटी राह न जाता चल ॥
छोटा हो या बड़ा कोई वह,
देता सब को ठीक बता।
जो कुछ मन के अन्दर होता, वोही कहता बोल सुना ॥
ऐसे भाव हैं जिसके होते, शुभ सम्मति ही देवे जो।
मन्त्री-पद के उच्चस्थान को, अगले भव में लेवे वो ॥

प्रश्न नं० १५

कई पुरुषों की रहती स्वामिन् !
स्वस्थ सदा ही यह काया।

कर्म और भावना दोनों अच्छे,
जिस नर के हो जाते हैं।
अच्छे फल ये अगले भव में,
ऐसे नर ही पाते हैं॥

प्रश्न नं० १८

किन कर्मों से प्राणी जग में, दीर्घ आयु को है पाता।
स्वस्थ है उसकी काया रहती, गीत खुशी के है गाता॥

उत्तर

जिसकी भावना है यह होती,
प्यारे सभी को अपने प्राण।
उनके अन्दर भी है वैसी, जैसी मेरे अंदर जान॥
जैसे मैं हूं जीना चाहता, वे भी जीना चाहते हैं।
जैसे दुःख सताता मुझको, वे भी दुःखी होजाते हैं॥
ऐसी भावना सेजो सबकी, सुखशान्ति ही चाहताहै।
भव अगले में ऐसा प्राणी

रहता स्वस्थ सदा वह मानव, जीवन सुखी बिताता है।
रोग-शोक भी कभी न होवे, मंगलाचार मनाता है॥

प्रश्न नं० १६

कई-कई प्राणी इस जग अन्दर,
विद्या बहुत ही पाते हैं।
किन कर्मों से स्वामिन्! इतने,
पण्डित वे बन जाते हैं।

उत्तर

दीन, अनाथ जो बाल-बालिका,
अपने आप न पढ़ सकते।
खर्च पढ़ाई करने का न, है सामर्थ्य वह कुछ रखते॥
उनकी भी जो करे सहायता, विद्या उन्हें पढ़ा देवे।
वजीफे और ईनाम स्कूलों में जो कोई लगा देवे॥
पुस्तकें किसी को ले देवे, या पुस्तकालय बनवा देवे।
ज्ञान-नयन के देनेमें जो अपना आप लगा देवे।

विद्यादान जो देता है, और दूसरों से दिलवाता है।
उसका फल वह अगले भव में विद्या को पाता है॥

प्रश्न नं० २०

निर्भयता है कैसे आती, यह मुझको समझाओ जी।
जिन कर्मों से भय मिट जाये, वह मुझको बतलाओ जी॥

उत्तर

जो प्राणी भयभीतों को जा, ढारस खूब बंधाता है।
फंसे हुये जो कष्टों में हों, उनको मुक्त कराता है॥
चंगुल में जो दुष्टों के हों, उनको जा छुड़वाता है।
आपत्ति हो जिनपर आई, उनके दुःख मिटाता है॥
किसी पे संकट आने पर जो,
दुखी स्वयं हो जाता है।
जबतक सुखी न देखे उसको, चैन कभी ना पाता है॥
देश पे संकट आजाए तो, सेवा अपनी है देता।
प्राणों तकको बलि देने का, व्रत है मन में ले लेता॥

निर्बल को देने वाला, निर्बलता को पाता है।
होगा न धनवान कदापि धन को दूर भगाता है॥

प्रश्न नं० २१

धन सुख की बाधाओं गुणवर !
दल कैसे नर पाता है।
किन कर्मों से शक्तिशाली
और धनी कहलाता है॥

उत्तर

विधवाओं की सेवा कर, उनको सुख पहुंचाता है।
या जो करे तपस्या उनका, सेवक वह बन जाता है॥
निर्बल हों जो उन्हें सहायता, पूरी-पूरी देता है।
प्रत्युपकार न उनसे कुछ भी, किसी रूप में लेता है॥

प्रश्न नं० २२

किसी-किसी के प्रभु जी ! होते,
मीठे सुन्दर ऐसे बोल।
मानों उनमें देते हैं वे,

किसी की बहु बेटी पर मिथ्या, दोषारोपण करता है।
कहने से निर्मूल भी बातों के नहीं वह डरता है॥

प्रश्न नं० २५

किसी के बोले अच्छे बोल भी,
सुनकर नहीं जो भाते हैं।
किस करणी का फल यह भगवन्!,
जग में मानुष पाते हैं।

उत्तर

रस-स्वाद के वश में होकर, पशु-पक्षी जो खाते हैं।
भूनभून कर मांस को, पापी नर जो चटकर जाते हैं॥
जिस जिह्वा द्वारा करना चाहिये,
मानुष को निर्दोष आहार।
खानी चाहिये कोई ना वस्तु,
दूषित हो जो किसी प्रकार॥
उस जिह्वा से खाते अण्डे,
और हैं खाते जीव का मांस।

दुर्गन्ध है उन के मुख से आती,
आनी चाहिये जहां सुवास ॥
ऐसे पावन अंग को पापी, आप अशुद्ध बनाते हैं।
उनका मन्दा फल वह मूर्ख, अन्ततः ऐसा पाते हैं ॥

प्रश्न नं० २६

किस कारण से मानुष जग में,
निर्धन अति बन जाता है?
धन के पीछे भागा फिरता,
कौड़ी पर ना पाता है॥
श्रम भी पूरा-पूरा करता, हाथ न पर कुछ आता है।
धन की तृष्णा में ही रहकर, तड़पतड़प मर जाता है॥

उत्तर

दान के करने से दानी को, जो कोई परे हटाता है।
आप भीदान के करने से या, जी को सदा चुराता है॥
पर-धन को जो धोखे छल से,
लूट के हरदम लाता है।

लोभ-लालसा में पड़कर जो,
नफा बहुत ही खाता है॥
ऐसा जीव है गौतम! मर कर,
निर्धन बन कर आता है।
निर्धनता के कष्ट भोग कर,
जीवन दुःखी बनाता है॥

प्रश्न नं० २७

प्राप्त गृह में हों सब वस्तु,
भोगने को पर कुछ न लहे।
खा-पी सके न कुछ भी वह,
और रोग से पीड़ित सदा रहे॥
सब सामग्री होने पर भी किस कारण से दुःख सहे।
सुन कर प्रश्न यह गौतम का थे वीरप्रभु ये वचन कहे॥

उत्तर

साधु-मुनियों की सेवा में, कोई प्राणी जाता है।
कपड़े आदि से मुनियों की, जो सेवा कर पाता है॥

और जगह भी अपने धन को
अच्छे काम लगाता है।
दीन-दुःखी की सेवा में भी,
अपना द्रव्य लुटाता है॥
किन्तु देकर दान वह ऐसा,
फिर पीछे पछताता है।
अगले भव में धन तो मिलता,
पर ना भोगने पाता है॥

प्रश्न नं० २८

खोटे पुत्र—पुत्री घर में, आकर जन्म जो लेते हैं
किन पापों के कारण स्वामिन्! आकर दुःख वो देते हैं

उत्तर

प्रेमियों में जो द्वेष फैला कर,
परस्पर देते उन्हें लड़ा।
भाइयों में जो फूट डालकर,
करते हैं उत्पात खड़ा॥

जहां भी देखें मिलकर बैठे, भाई होते हैं दो-चार ।
उनसे यह ना सहन है होना, उनमें उत्पन्न करते रार ॥
प्रेम में रहना किसी का उनको,
किञ्चित भी ना भाता है ।
देख के लड़ते झगड़ा करते, मन उनका हर्षाता है ॥
ऐसे पापियों के गृह अन्दर, जन्म कपूत का होता है ।
खोटे बालक पा कर पापी अपनी जान को खोता है ॥
शुभ सन्तान जो चाहें जग में,
द्वेष करायें किसी में ना ।
प्रेम में जो हैं परस्पर रहते,
उन में फूट फैलायें ना ॥

प्रश्न न० २६

पाला पोसा युवक पुत्र जो, अकाल मृत्यु को पाता है ।
इसका सार बता दो भगवन! कौन कर्म फल लाता है ॥

उत्तर

रख कर माल अमानत का,

बिल्कुल जाते मुकर हैं उससे,
वापिस नहीं लौटाते हैं॥
अमानत रख कर खा जाना,
यह काम नहीं इन्सानों का।
धन औरों का खा जाना है,
काम बड़े शैतानों का॥
पड़ी वस्तु जो पायें राह में, उसको लेते सदा दबा।
भूल से पैसे अधिक जो देवे, देते कभी न उसे बता।
मांगी वस्तु लायें किसी से, देने वाला जाये भूल।
लेते उसे पचा हैं पापी, पता न देते उसका मूल॥
भूल जाये कोई वस्तु घर में, लेते हैं वे उसे छुपा।
पूछने पर भी देते न हैं कुछ भी उसका पता बता॥
दीन गरीबों को ऋण देकर, उनको बहुत सताते हैं।
असली रकम से कई गुना वे सूद सदा खाजाते हैं।

प्रश्न नं० ३०

जिन-देव ! कहो क्यों प्राणी जग में,
पुत्र-हीन रह जाते हैं।

करते कई विवाह भी अपने,
पर सन्तान न पाते हैं ॥

उत्तर

औरों के जो बच्चों को हैं, मुख प्राणी देने मार।
छोटे-छोटे बच्चों से जो, करते हैं खोटे व्यवहार ॥
या जो हरे-भरे वृक्षों को, प्राणी जा कटवाते हैं।
अगले जन्ममें मानव ऐसे, सन्तति कभी नापाते हैं॥
सन्तति का मुख देखने को वे कई विवाह कराते हैं।
किन्तु पुत्रहीन ही रहकर, अन्त को वे मर जाते हैं ॥

प्रश्न नं० ३१

भर यौवन में किन पापों से,
स्त्री-वियोग हो जाता है।
युवावस्था में ऐसा दारुण,
नर क्यों कष्ट उठाता है ॥

उत्तर

जो व्यभिचारी पर-नारी से दुष्टाचार कमाते हैं।
अपनीनार को छोड़ के बाहर कालामुंह करवाते हैं।

गर्भ-नाश की औषध देकर, हिंसक जो बन जाते हैं।
वैद्य, हकीम या दाई द्वारा, पाप यह घोर कमाते हैं॥
ऐसे प्राणी मर कर गौतम! नारी भव में जाते हैं।
बांझपने के दुःख में फंस के, सन्तति सुख ना पाते हैं॥

प्रश्न नं० ३३

छोटी आयु में ही नारी, विधवा क्यों हो जाती है।
किन पापोंसे विधवा बनकर, संकट घोर उठाती है॥

उत्तर

ऊपर से जो सती है बनती, छुपकर पाप कमाती है।
धोखा अपने पति को देती, धर्म को दूर भगाती है॥
नारी-धर्म को इस प्रकार जो, काला दाग लगाती है।
अगले जन्म जवानी ही में, विधवा वह बन जाती है॥
विधवा बनना जो न चाहें, इन पापों से सदा डरें।
सदाचारिणी नित्य वे रहकर, धर्मध्यान को सदा करें॥

प्रश्न नं० ३४

किस कारण से स्वामिन्! मानुष,
अपनी आंख गंवाते...

जिस से बड़ा दुःख है बनता,
काणा वह कहलाता है ॥

उत्तर

खोटी दृष्टि पर-नारी पर, जो कोई दुष्ट टिकाता है।
पर-सम्पत्ति देख के या जो, ईर्षा मन में लाता है ॥
आंख में छोटे जीवों की या, कांटा कोई चुभाता है।
उनकी आंख निकाल के पापी, मनमें जो हर्षाता है ॥
इन पापों का प्राणी फिर वह, मन्दा फल यह पाता है।
नयन है खोता अपना, काणा वह बन जाता है॥

प्रश्न नं ३५

किन पापों के कारण स्वामिन्!
जीव अन्धा हो जाता है।
आंखें दोनों खोकर जग में,
संकट बड़े उठाता है ॥

उत्तर

[illegible]द के वृक्षों के नीचे, जो पापी आग लगाता है।
अगला जन्म जहां भी पावे, अन्धा वह बन जाता है॥

खेल-खेल के अन्दर ही या,
देता पंख और पूंछ मरोड़ ।
उसको अगले जन्म के अन्दर
मिलता उनका खोटा फल ।
कर्म भोग तो भोगना पड़ता,
सकता वह न कभी भी टल ॥
कुरूप बनाया औरों को तो, स्वयं बनेगा बड़ा कुरूप
गढ़ा जो औरों को खोदेगा, उसको मिलेगा आगे कूप ।

प्रश्न नं० ३६

ठिगने नर हैं देखे जात, एस क्यों बन जाते हैं ।
किन कर्मों से बौने का कद, जग में प्राणी पाते हैं ॥

उत्तर

जो औरों को सदा दबाते,
डालते सदा हैं उनपर ज़ोर ।
आप तो साधु बन दिखलाते,
औरों को हैं कहते चोर ॥

उन को खाने वाले भाई, रोगी सब बन जाते हैं।
स्वास्थ्य बिगड़ जाता है उनका कष्ट वे बहुत उठाते हैं॥
इस प्रकार जो लोभ के कारण,
रोगी लोग बनाता है।
अपने अल्प से लोभ के कारण,
जो यह पाप कमाता है॥
उसका मन्दा फल वह मूर्ख, इसी रूप में पाता है।
जैसे और बनाए रोगी, वैसा खुद बन जाता है॥

प्रश्न नं० ४३

कई प्राणी इस जग के अन्दर ऐसे देखे जाते हैं।
बाघ भेड़िए सिंह के द्वारा, फाड़ के खाये जाते हैं॥

उत्तर

जो भी पद–अधिकारी हो कर,
रिश्वत सर्वदा हैं खाते।
जब तक कुछ न मिलता उनको,
न कुछ काम हैं कर पाते॥

कोई बांध जो पानीका हो, उसको देता जाकर तोड़।
उससे खेतीनष्ट है होती, जीव हैं मरते लाख करोड़॥
ग्राम नगरमें पानी जाता, उससे होती बड़ीही हानि।
उसीबाढ़ से गिर जाते हैं, लाखों हीके महल मकान॥
सूखी घास खड़ी जो खेत में,
उसे लगाता है जो आग।
घास भी जलती और हैं जलते,
उसके अन्दर कीट और नाग॥

प्रश्न नं० ४६

किस करनी से नर को भगवन्!
नरक भोगने पड़ते हैं।
किन कर्मों से जीव अनेकों,
नरकों में जा सड़ते हैं॥

उत्तर

इस जग अन्दर हे गौतम!
जो हिंसा भीषण करते हैं।

१	२	३	४	५
२	१	३	४	५
१	३	२	४	५
३	१	२	४	५
२	३	१	४	५
३	२	१	४	५

१	३	४	२	५
३	१	४	२	५
१	४	३	२	५
४	१	३	२	५
३	४	१	२	५
४	३	१	२	५

१	२	३	५	४
२	१	३	५	४
१	३	२	५	४
३	१	२	५	४
२	३	१	५	४
३	२	१	५	४

१	३	५	२	४
३	१	५	२	४
१	५	३	२	४
५	१	३	२	४
३	५	१	२	४
५	३	१	२	४

१	२	४	५	३
२	१	४	५	३
१	४	२	५	३
४	१	२	५	३
२	४	१	५	३
४	२	१	५	३

१	४	५	२	३
४	१	५	२	३
१	५	४	२	३
५	१	४	२	३
४	५	१	२	३
५	४	१	२	३

१	३	४	५	२
३	१	४	५	२
१	४	३	५	२
४	१	३	५	२
३	४	१	५	२
४	३	१	५	२

१	४	५	३	२
४	१	५	३	२
१	५	४	३	२
५	१	४	३	२
४	५	१	३	२
५	४	१	३	२

२	३	४	५	१
३	२	४	५	१
२	४	३	५	१
४	२	३	५	१
३	४	२	५	१
४	३	२	५	१

२	४	५	३	१
४	२	५	३	१
२	५	४	३	१
५	२	४	३	१
४	५	२	३	१
५	४	२	३	१

भगवान् महावीर

वीर शासन हमारा तू अमन निशान है... ..
देश मेरा जिस में जना महान था,
अमन का वह देवता श्री वर्धमान था।
(१) दो हजार साल से कथा पुरानी है,
वही आज मैंने आप को सुनानी है।
आदमी को आदमी था खाए जा रहा
धर्म छोड़ पाप गीत गाए जा रहा।
याद रहा किसी को न भगवान था, अमन का ..
(२) नाम ले ईमान का था पाप कर रहे,
यज्ञ में हजारों पशु रोज मर रहे।
पाप का अन्धेर छाया घनघोर था,
छूआछूत का भी शोर चारों ओर था।
नारी-जाति का न जरा सन्मान था, अमन का...
(३) बढ़े जब घोर यहां अत्याचार थे,
मचे जब बेकसों के हाहाकार थे।

देखता भी कुछ आगे [illegible] है।
[illegible] था, अमन का..
(७) हो गया [illegible] जब [illegible] यह,
दुखियों को गया [illegible] तस्वीर यह।
"तन मन देश-सेवा में लगाऊँगा—
दुखियों का दुःख सब मैं मिटाऊँगा"
ले लिया यह प्रण उसने महान था, अमन का...
(८) जान के असार इस संसार को,
छोड़ दिया झट फिर घरबार को।
शाही तख़्त छोड़ के बना फ़क़ीर था,
त्याग यह कमाल और बेनज़ीर था।
पतितों का नाथ करुणानिधान था, अमन का...
(९) जंगलों में जा के आसन जमा लिया,
साधना में तन-मन था लगा दिया।
बारह साल जप-तप में गुज़ारे थे,
कामरूप वैरी चुन-चुन मारे थे।

(१३) भूला दया-धर्म का सुझाया वीर ने,
आदमी को आदमी बनाया वीर ने ।
शिष्य बने धनी रंक राजे रानियां,
छोड़ के वे धन-धान्य राजधानियां ।
सत्य का भण्डार वह दया की खान था, अमन का
(१४) जग से मिटाया नाम अत्याचारों का,
बेड़ा किया पार आपने हजारों का ।
महिमा का न तेरी किसे पाया पार है,
ज्ञानमुनि तारा तू ने संसार है ।
अन्त पावापुर पाया निर्वाण था,
अमन का वह देवता श्री वर्धमान था ।

ओ वेला याद कर—

तर्ज—ओ वेला याद कर, ओ वेला......
ओ वेला याद कर, ओ वेला......
जद मात गर्भ विच आके, अपना सर उलटा लटका
तू कुरलौंदा सैं, ओ वेला याद कर......

(१३) [illegible] का भुलाया वीर ने,
आदमी को आदमी बनाया वीर ने।
शिष्य बने धनी रंक राजे रानियां,
छोड़ के वे धन-धान्य राजधानियां।
सत्य का भण्डार वह दया की खान था, अमन का
(१४) जग से मिटाया नाम अत्याचारों का,
बेड़ा किया पार आपने हजारों का।
महिमा का न तेरी किसे पाया पार है,
ज्ञानमुनि तारा तू ने संसार है।
अन्त पावापुर पाया निर्वाण था,
अमन का वह देवता श्री वर्धमान था।

ओ वेला याद कर—

तर्ज—ओ वेला याद कर, ओ वेला......
ओ वेला याद कर, ओ वेला......
जद मात गर्भ विच आके, अपना सर उलटा लटकाके,
तू कुरलौंदा सैं, ओ वेला याद कर......

देवता भी झुके आगे पुण्यवान के ।
बाल बूढ़ा शैदा इस पर जहान था, अमन का ..

(७) हो गया जवान जब बलवीर यह,
दुःखियों की गया बन तकदीर यह ।
"तन मन देश-सेवा में लगाऊंगा—
दुःखियों का दुःख सब मैं मिटाऊंगा"
ले लिया यह प्रण उसने महान था, अमन का...

(८) जान के असार इस संसार को,
छोड़ दिया झट फिर घरबार को ।
शाही तख्त छोड़ के बना फ़क़ीर था,
त्याग यह कमाल और बेनज़ीर था ।
पतितों का नाथ करुणानिधान था, अमन का...

(९) जंगलों में जा के आसन जमा लिया,
साधना में तन-मन था लगा दिया ।
बारह साल जप-तप में गुज़ारे थे;
कमरूप वैरी चुन-चुन मारे थे ।

भगवान महावीर

[illegible] मानिए हमारा तू जन्नत निशान है… ..
देश मेरा जिस से बना महान था,
अमन का वह देवता श्री वर्धमान था।

(१) दो हजार साल से कथा पुराणी है,
यही आज मैंने आप को सुनानी है।
आदमी को आदमी था खाए जा रहा
धर्म छोड़ पाप गीत गाए जा रहा।
याद रहा किसी को न भगवान था, अमन का ..

(२) नाम ले ईमान का था पाप कर रहे,
यज्ञ में हजारों पशु रोज मर रहे।
पाप का अन्धेर छाया घनघोर था,
छुआछूत का भी शोर चारों ओर था।
नारी-जाति का न जरा सन्मान था, अमन का...

(३) बढ़े जब घोर यहां अत्याचार थे,
मचे जब बेकसों के हाहाकार थे।

[illegible] के ।
[illegible] था, अमन का...

(७) हो गया [illegible] जब [illegible] यह,
दुखियों को [illegible] नज़दीक यह ।
"तन मन देश-सेवा में लगाऊंगा—
दुःखियों का दुःख सब मैं मिटाऊंगा"
ले लिया यह प्रण उसने महान था, अमन का...

(८) जान के असार इस संसार को,
छोड़ दिया झट फिर घरबार को ।
शाही तख्त छोड़ के बना फ़क़ीर था,
त्याग यह कमाल और बेनज़ीर था ।
पतितों का नाथ करुणानिधान था, अमन का...

(९) जंगलों में जा के आसन जमा लिया,
साधना में तन-मन था लगा दिया ।
बारह साल जप-तप में गुज़ारे थे;
कमरूप वैरी चुन-चुन मारे थे

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

तेरी महिमा बड़ी महान—

[illegible]—देख तेरे संसार की हालत क्या हो गई...

वर्द्धमान श्री महावीर को मेरा हो प्रणाम,

तेरी महिमा बड़ी महान......

करुणासागर दीनदयालु तारा सकल जहान, तेरी...

पिता सिद्धार्थ त्रिशला जाया,

घर-घर में था आनन्द छाया,

देव-देवियां मंगल गाया,

धर्म का तू अवतार कहाया।

कुण्डलपुर में जन्म लिया था वीर प्रभु भगवान,तेरी...

दीन-दुःखी का तू रखवाला,

फिर भी ना शुभ कर्म कमाया,
वदियों में सर्वस्व लुटाया।
सावधान ओ जाने वाले! अब तो होश में आ, अपना
काम, क्रोध, मोह, लोभ लुटेरे,
तुझको रहते हरदम घेरे,
लूट रहे धन-माल को तेरे,
समझे बैठा जिनको मेरे।
लुट रही पून्जी तेरी पगले! इनसे पिण्ड छुड़ा, अपना
आखिर इकदिन चलना भाई!
साथ न जाएगी इक पाई,
कर ले जग में नेक कमाई,
आगे होगी यही सहाई।
ज्ञानमुनि तू नर—जीवन को एक आदर्श बना, अपना

जपले निशदिन मन मेरे—

तर्ज—मन डोले, मेरा तन डोले......

उपकारी, संकटहारी, प्रभु वीर हैं तारणहार जी,

जपले निशदिन मन मेरे,

ानवना ने मानवता का जब सर्वस्व था छीना,
ानव को था कठिन हो गया सुखशांति से जीना।
अरे ओ सुख शान्ति से जीना,
नव आए, दर्श दिखाए,
प्रभु दुःखियों के आधार जी, जपले...

ाप मिटाया, धर्म फैलाया, जीवन-पाठ पढ़ाया,
त्य अहिंसा का मानव को महासत्य समझाया।
प्रभु ने महासत्य समझाया,
जगनायक, प्रभु सुखदायक,
जिनधर्म के थे अवतार जी, जपले...

र्जुनमाली चण्डकौशिया प्रभु ने पार लगाया,
ाजकुमारी चन्दनबाला का सब दुःख मिटाया।
प्रभु ने था सब दुःख मिटाया,
सुखकारी, मंगलकारी,
प्रभु करुणा के भण्डार जी, जपले...

स्याद्वाद और कर्मवाद के प्रभु ने वाद्य बजाए,
ज्ञानमुनि प्रभु वीर ने जग में धर्म के दीप जलाए।
प्रभु ने धर्म के दीप जलाए,
मतवाले!, प्रभु गुण गाले,
तेरा बेड़ा हो जाए पार जी,जप ले...

जग में यदि सुख पाना है—

तर्ज—मन डोले, मेरा तन डोले......

हितकारी, संकटहारी, प्रभु नाम का ले आधार तू,
जग में यदि सुख पाना है।
लाख चौरासी भटक के आया, पाया मानव-जीवन,
देवता जिसको तरस रहे हैं मिला तुझे वह नर-तन।
भाई! मिला तुझे वह नर-तन।
कुछ पाया, लाभ उठाया,
कुछ अपना आप सम्भाल तू,जग में...
पल-पल करके जीवन-धागे तेरे टूट रहे हैं,
काम, क्रोध, मोह, लोभ लुटेरे तुझको लूट रहे हैं

(१६१)

ओ भाई ! तुझको लूट रहे हैं ।
समझ ज़रा, क्या होय रहा ?

कुछ मन में सोच विचार तू, जग में...

मात, पिता, सुत, नारी, भ्राता कोई साथ न जाए,
जिन के कारण हंस-हंस मूर्ख ! तू ने पाप कमाए ।

ओ पगले ! तू ने पाप कमाए,

यह माया, सुन्दर काया,

ले कर कुछ पर-उपकार तू, जग में...

दीनजनों के काम भी आया ? रोता कोई हंसाया ?
किसी दुःखी के आंसु पोंछे, या उलटा कलपाया ?

ओ पगले ! या उलटा कलपाया ?

मतवाले !, मन समझाले,

मोह माया लोभ विसार तू, जग में...

ज्ञानमुनि यह जीवन-नैया डगमग-डगमग डोले,
प्रभु नाम का लेकर चप्पू, झटपट पार तू होले ।

ओ भाई ! झटपट पार तू होले ।

दिन जाए, फिर नहीं आएं,

प्रभु-चरणों से कर प्यार तू, जग में...

महावीर जय महावीर—

तर्ज--मन डोले, मेरा तन डोले......

महावीर, जय महावीर, महावीर की जय जयकार हो,

वीर की बाजे बांसुरिया।

सत्य-अहिंसा के घर-घर में सुन्दर फूल खिलेंगे,

वैर-विरोध मिटाकर भाई-भाई आन मिलेंगे।

ओ भाई! भाई आन मिलेंगे,

महावीर, जय महावीर,

महावीर की जय जयकार हो, वीर की .

स्वर्ग बनेगी दुनिया सारी, सुखी रहें नर-नारी,

रोग, शोक भी कभी न होगा कोई न दुःखियारी।

होगा कोई न दुःखियारी।

महावीर,जय महावीर,

महावीर की जय जयकार हो, वीर की...

महाशान्ति का राज्य चलेगा, भभके न युद्धज्वाला
रणचण्डी न पहन सकेगी नरमुण्डों की माला।,
ओ भाई ! नरमुण्डों की माला,
महावीर, जय महावीर,
महावीर की जय जयकार हो, वीर की...
प्रेम की गंगा सदा बहेगी होगा तेज निराला,
लक्ष्मण जैसे भाई होंगे, बहिनें चन्दनबाला।
होंगी बहिनें चन्दनबाला।
महावीर, जय महावीर,
महावीर की जय जयकार हो, वीर की...
ज्ञानमुनि प्रभु वीर का पावन नाम है तारणहारा,
सुखशान्ति का स्रोत बहाए, है यह संकटहारा।
प्रभु का नाम है संकटहारा।
महावीर, जय महावीर,
महावीर की जय जयकार हो, वीर की...

— —

तेरा हो नाम कल्याण—

तर्ज—मेरा जूता है जापानी……

तेरा हो नाम कल्याण, जपले वीर भगवान,
मिला मानव अनमोल, अरे भोले इन्सान !
नाम प्रभु का मंगलकारी, जीवन सुखी बनाए,
शुद्ध हृदय से नाम जपे जो, भवसागर तर जाए।
सुख पायेगा महान, कभी होवे ना हैरान, मिला…
पार हुआ वह जिसने फेरी, प्रभु नाम की माला,
सेठ सुदर्शन, अर्जुनमाली, तर गई चन्दनबाला।
करले प्रभु गुण गान, मिलें स्वर्ग विमान, मिला…
काम, क्रोध, मोह, लोभ लुटेरे, इनसे बचना भाई !
प्रभु नाम का ले तू शरणा, करले नेक कमाई
अन्त छोड़ना जहान, क्यों तू बना अनजान, मिला…
ज्ञानमुनि प्रभु नाम की महिमा, है यह अपरम्पार,
प्रभु नाम ने लाखों पापी, कर दिए जग से पार।
यही सुखों का निधान, जपले सुबह और शाम, मिला।

चन्दना की पुकार—

तर्ज—ओ दूर जाने वाले—

ओ सेठ वाले मेरे, बातों पै ध्यान लाना।
मुझ को खरीदता क्यों, क्या है तेरा निशाना ?
मुझको खरीदने का, तेरा उद्देश्य क्या है?
जो भी है मन में तेरे, मुझ को ज़रा बताना।
यह वासना-अन्धेरी, चहुँ ओर छा रही है।
मैं डर रही हूं इससे, मुझ को न ले के जाना।
माता ने धर्म बदले, निज प्राण जो दिए हैं।
वह धर्म ही है मेरे, जीवन का इक ठिकाना।
दुनिया के वैभवों की, इच्छा नहीं है मुझ को।
मैं चाहती हूँ केवल, अपना धर्म बचाना।
सेवा करूंगी सब की, चरणों में सीस दूंगी।
तुम धर्म के पिता बन, बेटी मुझे बनाना।२
मंजूर गर पिता जी, मेरी यह बात तुमको।
तब ही खरीद करना, यूं ही न धन लुटाना॥

चन्दना की बातें सुनकर, लोहार झुक गया था।
बेड़ी बना के उसकी, लेकर हुआ रवाना॥
जग में यही बनेगा, जो भी धर्म करेगा।
ओर ज्ञान मुनि बनेगा, जो धर्म का दीवाना॥

सत्य अहिंसा के अवतार—

तर्ज—ले के पहिला-पहिला प्यार—

जीवन नय्या के आधार, सत्य अहिंसा के अवतार।
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर—
सिद्धार्थ के लाल प्यारे,
त्रिशला माता की आंखों के तारे।
हर्षित हुए सभी नर नार,
मिल कर बोलें जय जयकार॥
कुण्डल नगरी में आए थे जब महावीर।
पाप घटा जब छाई हुई थी,
धर्म की महिमा भुलाई हुई थी।
चलती पशुओं पर तलवार,
सारा तड़प रहा संसार।

कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर......
धर्म-कर्म का भेद बताने,
जीवन का आदर्श सुनाने।
देने सब को सच्चा प्यार,
करने पापों का उद्धार॥
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर......
दुष्टों मिलन का सब अंधियारा,
दूर हटा कर किया उजियारा।
सुनकर दुखियों की पुकार,
आए करुणा के अवतार॥
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर.....
अर्जुनमाली चन्दनबाला,
चण्डकौशिक और गुरु गोशाला।
किया उनका बेड़ा पार,
दिए और भी लाखों तार॥
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर......
ज्ञान मुनि प्रभु शरण में आवो,
जीवन अपना सफल बनाओ

[illegible]

[illegible] महिमा अपरम्पार ॥

[illegible] प्रभु महावीर.........

त्रिशलानन्दन जय महावीर——

तर्ज: [illegible]......

त्रिशलानन्दन जय महावीर ... ...

करुणानन्दन जय महावीर ... ...

१ मुनिमनरञ्जन दुःखनिकन्दन,
देव करें नित चरणन वन्दन,
भयभञ्जन प्रभु अति गंभीर, त्रिशलानन्दन.

२ अजर अमर अविनाशी भगवन् !,
जीवनज्योति प्रकाशी भगवन् !
केवलज्ञानी दिव्यशरीर, त्रिशलानन्दन.....

३ वर्धमान जगनायक स्वामी,
घट-घट के हैं अन्तर्यामी,
वीतरागता की तस्वीर, त्रिशलानन्दन .....

४ हिंसा अत्याचार मिटाया,
प्रभु ने जीवनपाठ पढ़ाया,
वाणी अमृत है अकसीर त्रिशलानन्दन.....

५ आत्मवाद और कर्मवाद का,

भेद बताया स्याद्वाद का,

पावन प्रेम पिलाया नीर, त्रिशलानन्दन ......

६ अर्जुनमाली चन्दनबाला,

फेरी तेरे नाम की माला,

कट गई कर्मों की जंजीर, त्रिशलानन्दन ......

७ कौशिक ने जब डंक चलाया,

प्रभु ने करुणा-स्रोत बहाया,

विष की धारा बन गई क्षीर, त्रिशलानन्दन......

८ नाम प्रभु का मंगलकारी,

सुख का दाता संकटहारी,

पार करेगा यही अखीर, त्रिशलानन्दन......

९ ज्ञानमुनि जो निशदिन ध्यावे,

सुखशान्ति और सम्पति पावे,

उस की सुधर जाए तकदीर, त्रिशलानन्दन......

❀ वीर-स्तुति ❀

(आरती)

तर्ज-जय जगदीश हरे !......

जय महावीर प्रभो !, स्वामी जय महावीर प्रभो !
जगनायक सुखदायक, अति गम्भीर प्रभो ! ॐ जय
कुण्डलपुर में जन्मे, त्रिशला के जाए, स्वामी त्रिशला.
पिता सिद्धार्थ राजा, सुर नर हर्षाए, ॐ जय.
दीनानाथ दयानिधि, हैं मंगलकारी, स्वामी हैं मंगल.
जगहित संयम धारा, प्रभु परउपकारी, ॐ जय.
पापाचार मिटाया, सत्पथ दिखलाया, स्वामी सत्पथ.
दयाधर्म का झण्डा, जग में लहराया, ॐ जय.
अर्जुनमाली गौतम, श्रीचन्दनबाला, स्वामी श्रीचन्दन.
पार जगत से बेड़ा, इन का कर डाला, ॐ जय.
पावन नाम तुम्हारा, जग तारणहारा, स्वामी जग.
निशदिन जो नर ध्यावे, कष्ट मिटे सारा, ॐ जय.
करुणासागर ! तेरी, महिमा है न्यारी, स्वामी महिमा
ज्ञान मुनी गुण गावें, चरणन बलिहारी, ॐ जय.

दिन जाए, फिर नहीं आएं,

प्रभु-चरणों से कर प्यार तू, जग में...

महावीर जय महावीर—

तर्ज—मन डोले, मेरा तन डोले......

महावीर, जय महावीर, महावीर की जय जयकार हो,

वीर की बाजे बांसुरिया।

सत्य-अहिंसा के घर-घर में सुन्दर फूल खिलेंगे,
वैर-विरोध मिटाकर भाई-भाई आन मिलेंगे।

ओ भाई! भाई आन मिलेंगे,

महावीर, जय महावीर,

महावीर की जय जयकार हो, वीर की .

स्वर्ग बनेगी दुनिया सारी, सुखी रहें नर-नारी,
रोग, शोक भी कभी न होगा कोई न दुःखियारी।

होगा कोई न दुःखियारी ।

महावीर,जय महावीर,

महावीर की जय जयकार हो, वीर की...

महाशान्ति का राज्य चलेगा, धधके न युद्धज्वाला
रणचण्डी न पहन सकेगी नरमुण्डों की माला।,
ओ भाई ! नरमुण्डों की माला,
महावीर, जय महावीर,
महावीर की जय जयकार हो, वीर की...
प्रेम की गंगा सदा चलेगी होगा तेज निराला,
लक्ष्मण जैसे भाई होंगे, बहिनें चन्दनबाला।
होंगी बहिनें चन्दनबाला।
महावीर, जय महावीर,
महावीर की जय जयकार हो, वीर की...
ज्ञानमुनि प्रभु वीर का पावन नाम है तारणहारा,
सुखशान्ति का स्रोत बहाए, है यह संकटहारा।
प्रभु का नाम है संकटहारा।
महावीर, जय महावीर,
महावीर की जय जयकार हो, वीर की...

——

तेरा हो जाए कल्याण—

तर्ज—मेरा जूता है जापानी......

तेरा हो जाए कल्याण, जपले वीर भगवान,
मिला समय अनमोल, अरे भोले इन्सान !

नाम प्रभु का मंगलकारी, जीवन सुखी बनाए,
शुद्ध हृदय से नाम जपे जो, भवसागर तर जाए।
सुख पायेगा महान, कभी होवे ना हैरान, मिला...

पार हुआ वह जिसने फेरी, प्रभु नाम की माला,
सेठ सुदर्शन, अर्जुनमाली, तर गई चन्दनबाला।
करले प्रभु गुण गान, मिलें स्वर्ग विमान, मिला...

काम, क्रोध, मोह, लोभ लुटेरे, इनसे बचना भाई !
प्रभु नाम का ले तू शरणा, करले नेक कमाई
अन्त छोड़ना जहान, क्यों तू बना अनजान, मिला...

ज्ञानमुनि प्रभु नाम की महिमा, है यह अपरम्पार,
प्रभु नाम ने लाखों पापी, कर दिए जग से पार।
।ही सुखों का निधान, जपले सुबह और शाम, मिला...

चन्दना की पुकार—

तर्ज—ओ दूर जाने वाले—

। लेने वाले मेरी, बातों पै ध्यान लाना।
क को खरीदता क्यों, क्या है तेरा निशाना?
मुझको खरीदने का, तेरा उद्देश्य क्या है?
जो भी है मन में तेरे, मुझ को जरा बताना।
ह वासना-अन्धेरी, चहुँ ओर चल रही है।
डर रही हूं उससे, मुझ को न ले के जाना।
माता ने धर्म बदले, निज प्राण खो दिए हैं।
वह धर्म ही है मेरे, जीवन का इक ठिकाना।
ुनिया के वैभवों की, इच्छा नहीं है मुझ को।
चाहती हूँ केवल, अपना धर्म बचाना।
सेवा करूंगी सब की, चरणों में सीस दूंगी।
तुम धर्म के पिता बन, बेटी मुझे बनाना।१
ज़ूर गर पिता जी, मेरी यह बात तुमको।
ब ही खरीद करना, यूं ही न धन लुटाना॥

चन्दना की बातें सुनकर, खरीदार झुक गया था।
चेटी बना के उसको, लेकर हुआ रवाना॥
जग से वही तरेगा, जो भी धर्म करेगा।
और ज्ञान मुनि बनेगा, जो धर्म का दीवाना॥

सत्य अहिंसा के अवतार—

तर्ज—लै के पहिला-पहिला प्यार—

जीवन नय्या के आधार, सत्य अहिंसा के अवतार।
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर—
सिद्धार्थ के लाल प्यारे,
त्रिशला माता की आंखों के तारे।
हर्षित हुए सभी नर नार,
मिल कर बोलें जय जयकार॥
कुण्डल नगरी में आए थे जब महावीर।
पाप घटा जब छाई हुई थी,
धर्म की महिमा भुलाई हुई थी।
चलती पशुओं पर तलवार,
सारा तड़प रहा संसार।

कुण्डल नगरी में आए थे तब महावीर.....
धर्म-कर्म का भेद बताने,
जीवन का आदर्श सुनाने।
देने सब को सच्चा प्यार,
करने जीवों का उद्धार॥
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर.....
जुल्मों सितम का सब अन्धियारा,
दूर हटा कर किया उजियारा।
सुनकर दु:खियों की पुकार,
आए करुणा के भण्डार॥
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर.....
अर्जुनमाली चन्दनबाला,
चण्डकौशिक और मूढ गवाला।
किया उनका बेड़ा पार,
दिए और भी लाखों तार॥
कुण्डल नगरी में आए थे प्रभु महावीर......
ज्ञान मुनि प्रभु शरण में आवो,
जीवन अपना सफल बनावो॥

आत्मवाद और कर्मवाद का,
भेद बताया स्याद्वाद का,
पावन प्रेम पिलाया नीर, त्रिशलानन्दन ......
अर्जुनमाली चन्दनबाला,
फेरी तेरे नाम की माला,
कट गई कर्मों की जंजीर, त्रिशलानन्दन ......
कौशिक ने जब डंक चलाया,
प्रभु ने करुणा-स्रोत बहाया,
विष की धारा बन गई क्षीर, त्रिशलानन्दन......
नाम प्रभु का मंगलकारी,
सुख का दाता संकटहारी,
पार करेगा यही अखीर, त्रिशलानन्दन......
ज्ञानमुनि जो निशदिन ध्यावे,
सुखशान्ति और सम्पति पावे,
उस की सुधर जाए तक़दीर, त्रिशलानन्दन......

——

❀ वीर-स्तुति ❀

(आरती)

ध्वनि-जय जगदीश हरे !......

जय महावीर प्रभो !, स्वामी जय महावीर प्रभो !
जगनायक सुखदायक, अति गम्भीर प्रभो ! ॐ जय
कुण्डलपुर में जन्में, त्रिशला के जाए, स्वामी त्रिशला
पिता सिद्धार्थ राजा, सुर नर हर्षाए, ॐ जय
दीनानाथ दयानिधि, हैं मंगलकारी, स्वामी हैं मंगल.
जगहित संयम धारा, प्रभु परउपकारी, ॐ जय.
पापाचार मिटाया, सत्पथ दिखलाया, स्वामी सत्पथ.
दयाधर्म का झण्डा, जग में लहराया, ॐ जय.
अर्जुनमाली गौतम, श्रीचन्दनबाला, स्वामी श्री चन्दन.
पार जगत से बेड़ा, इन का कर डाला, ॐ जय.
पावन नाम तुम्हारा, जग तारणहारा, स्वामी जग.
निशदिन जो नर ध्यावे, कष्ट मिटे सारा, ॐ जय.
करुणासागर ! तेरी, महिमा है न्यारी, स्वामी महिमा.
ज्ञान मुनी गुण गावे, चरणन बलिहारी, ॐ जय.

——